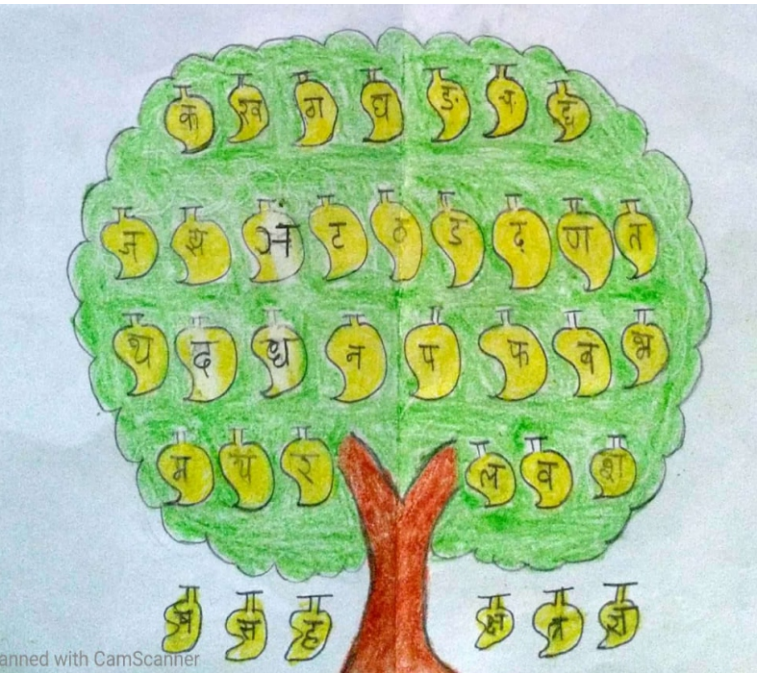

बातें करने वाले सर और मजेदार पढ़ाई

– क्रतिका

ऐसा माना जाता है कि भारी बस्ता और भारी कॉपियां ही पढ़ा हुआ होने का प्रमाण हैं। हम कितनी भी सुंदर लेखनी से कॉपियां भर लें, पर उसके कोई मायने नहीं अगर उसकी एक समझ न बन पाये।

आज स्कूल में तुमने क्या किया?" – माँ ने पूछा।

"बातें" हाथ धोते वक्त मिनी ने झट से मुस्कुराकर बस एक शब्द कहा। यह सुनकर मां को थोड़ा आश्चर्य महसूस हुआ। थकी हुई मिनी को मां ने आदत डाली थी कि स्कूल से आते ही वह दिन भर की घटनाएं ज्यों की त्यों मां को सुनाये। धीमे से स्वर में कपड़े बदलते हुए या खाना खाते वक़्त रोज़ तो मिनी आकर हर पीरियड के बारे में विस्तार से बताती थी। मैडम के साड़ी के रंग से लेकर, सर ने सन्डे को बालों में डाई की भी है या नहीं, यह सब भी बता देती। हालांकि इन सब बातों से मां को कुछ ख़ास अंदाजा नहीं लगता था कि स्कूल में क्या हो रहा है। लेकिन जब उस पूरी बात में पढ़ाई के कुछ शब्द उनके कान में पड़ते तो वह समझती कि स्कूल में सब ठीक चल रहा है।

इसके अलावा दोपहर को जब मिनी सो जाती तो कॉपी में मिले होमवर्क और मिनी की सब बातों में कुछ मेल देखा करती, तब उसे पूरी तसल्ली हो जाती कि स्कूल में पढ़ाई–लिखाई का माहौल तो है।

मिनी अब मौन थी। उसने हाथ धोकर कपड़े बदले और आंगन में चटाई बिछाकर खाने के लिए बैठ गयी। वहीं दूसरी ओर उसकी मां उस शांति से व्याकुल सी हो रही थी।

खाने के दो निवाले जो मिनी के गले से नीचे उतरे, उसने बिना सांस लिए बातों की झड़ी लगा दी। "नीमा मैडम के जाने के बाद ना मां, उनकी जगह हमारे एक नए सर आये हैं। वो मुझसे बहुत सारी बातें करते हैं। हां, पर वो सिर्फ मुझसे नहीं, सब से बातें करते हैं। वो दूसरी बेंच वाला सचिन है ना मां, जो कभी कुछ नहीं बोलता, सर उससे भी बातें करते हैं और तो और सचिन भी उनसे उतनी ही बातें करता है। आज तो उन्होंने सुनीता को भी बोलना सिखा दिया। पता है सुनीता का घर कहां है? उसके दादा के भी दादा जी हुबली के पास के एक गांव से आये थे। नए सर बता रहे थे कि हुबली कर्नाटक का एक बड़ा शहर है। विजयनगर के राजा ने वहां बहुत से सुन्दर मंदिर बनवाये। वहां न, एक झील भी है, कुछ उन्कल नाम बताया था उन्होंने। वह हमारी झील से भी बहुत पुरानी है। सुनीता यह भी कह रही थी कि तब उसके घर वालों को यहां की भाषा नहीं आती थी, पर अब उनके घर के सब लोग गढ़वाली जानते हैं। वैसे तो सुनीता को चैंसू पसंद है पर उसके यहां ज्यादातर दिन में सांभर और भात खाते हैं। उसको अपने पापा के हाथ का सांभर ज्यादा अच्छा लगता है।"

यह कहते ही मिनी ने राजमा की थाली बेमन से आगे खिसका दी।

"तुम भी कभी सांभर बनाओ ना, नए सर कह रहे थे उसमें दाल के साथ बहुत सारी सब्जियां भी डाली जाती हैं और

वह स्वादिष्ट बनता है।"

"बनाउंगी कभी। अभी मेरा दिमाग न खा। कब से खाना ठंडा हो रहा है चल झटपट खा। तेरी बातें तो खत्म होने का नाम ही न ले रहीं।"

"तुम तो मुझे जब देखो तब चुप करा देती हो। पूरी बात भी नहीं करने देती हो। लेकिन नए सर ऐसा कुछ भी नहीं कहते। वो किसी से नहीं कहते कि चुप हो जाओ। वो सब बच्चों की बातें सुनते हैं। उनकी कक्षा में हमें कॉपी पेन की भी जरूरत नहीं पड़ती, बस बातें करनी होती हैं। खूब सारी। आज जब मैं शीतल को अपनी झगुली के बारे में बता रही थी, जो तुमने इस रविवार बिट्टू दीदी की शादी के लिए दिलाई थी ना। तब पीछे बैठा रोहित और उसके दोस्त हंस रहे थे। उनको समझ ही नहीं आया कि मैं क्या कह रही हूं।

पर फिर नए सर ने मेरी बात सुनी और वो मुस्कराने लगे। उनको तो झगुली के बारे में भी मालूम है। वो कहते कि इसे अंग्रेजी में फ्रॉक कहते हैं और यह शब्द जर्मन भाषा से आया हुआ है। ऋतु ने जब नए सर से पूछा कि उनको इतना सब कैसे मालूम है?"

तब उन्होंने बोला, "बातें कर के।"

"मां कितना अच्छा है ना, अगर मैं बातें करके ही सब सीख गयी तो फिर किताबों की ज़रूरत ही नहीं होगी। फिर तो क्या तुम भी पढ़ी–लिखी हो जाओगी ना, हमारी मैडम जी जैसे? अब से मैं तुमसे वो सारी बातें करूंगी जो नए सर मुझसे कक्षा में करते हैं।"

"अच्छा चुप कर! नौनी इतक्या नि बोल्दी (लड़कियों को इतना नहीं बोलना चाहिए)। गप्पें लगा के कोई बड़ा न बना आज तक छोरी। जल्दी खाकर सो जा थोड़ी देर। फिर शाम को कॉपी निकालकर काम करने बैठ जाना।"

मिनी की इतनी सारी बातें सुनकर माँ को कुछ समझ नहीं आ रहा था। चहकती मिनी को देखकर उसे अच्छा तो लगा पर आज उसने किसी पाठ की बात नहीं करी। बस नए सर, नए सर का ही जाप कर रही थी। जब मां ने मिनी की सामाजिक विज्ञान की कॉपी खोली तो वह भी खाली पड़ी हुई थी। सिर्फ आज की तारीख और पाठ 2–विविधता नाम का शीर्षक पड़ा हुआ था। कोरी कॉपी देख मां को लगा व्यर्थ ही हो गया आज का दिन।

इससे अच्छा तो आज मिनी घास ही काटने चलती!

एक ग्रामीण क्षेत्र में बच्चे अगर घर आते ही पुस्तक में लीन हो जाए और कॉपी में लिखने लगें तो उन्हें पढ़ने–लिखने वाला माना जाने लगता है। माता–पिता को भी लगता है कि बच्चा पढ़ रहा है और कुछ न कुछ तो बन ही जाएगा। पन्ने पलट के जब अभिभावक कॉपी देखते हैं तो उनको तसल्ली देने के लिए बस भरे हुए पन्ने और लाल स्याही से कुछ टिक के निशान ही काफी हैं।

स्कूल में अगर किसी दिन बच्चा न जाए तो एक चिंतित और सचेत माता–पिता का मकसद एक ही होता है, कि उसका काम पूरा हो जाए। कॉपी में शिक्षक ने जो कुछ भी लिखाया, वो हू–ब–हू बच्चे की कॉपी में भी उतारा हुआ हो।

"अजी मेरा बेटा तो स्कूल से आते ही लिखने बैठ जाता है।"

"न जाने ये क्या लिखते रहते हैं, बहुत पढ़ाई है आज कल तो।"

अक्सर अभिभावकों से बात करने में कुछ ऐसी बातें सुनने में आती हैं।

लेकिन सवाल यह है कि असल में वो क्या पढ़ रहा है? या बस केवल उतार रहा है? सोचने की बात यह है कि उतार लेने भर से ही अभिभावकों को इस बात की तसल्ली क्यों हो जाती है कि स्कूल में पढ़ाई हो रही है और उनका बच्चा सब कुछ सीख रहा है। जबकि, एक बच्चा सिर्फ लिखने भर से ही नहीं सीखता। उसका सीखना तो उसके परिवेश से शुरू होता जाता है और ज्ञान कक्षा–दर–कक्षा नहीं बढ़ता बल्कि अपने परिवेश में घुलने–मिलने और समझ विकसित करने से सृजित होता है।

किताबों और कॉपियों में लिखी बहुत सारी बातें एक कक्षा से ऊपर की कक्षा में ज्यादातर नहीं जा पातीं फिर भी ऐसा माना जाता है कि भारी बस्ता और भरी कॉपियां ही पढ़ा हुआ होने का प्रमाण हैं। हम कितनी भी सुंदर लेखनी से कॉपियां भर लें, पर उसके कोई मायने नहीं अगर उसकी एक तरह समझ न बन पाये। हैरानी की बात यह है कि अब बच्चे भी इसी ढर्रे में रम चुके हैं। स्कूल में अक्सर वो शिक्षक के आगे पीछे "काम दे दीजिए, काम चेक कर लीजिए" आदि कहते घूमते रहते हैं।

उनका उद्देश्य काम को समझना नहीं बल्कि उसको एक सुंदर लिखाई में ज्यों का त्यों उतारकर किसी तरह से शिक्षक से एक गुड पाने तक रह गया है। शिक्षक द्वारा दिया गया 'गुड' या अच्छी टिप्पणी प्रोत्साहन का जरिया

कम और अन्य छात्रों के सामने इतराने का एक माध्यम बन गया है।

लेकिन, आज मिनी में स्कूल से घर आने के बाद एक अलग उत्साह था। वह उत्साह उसकी बातों में दिख रहा था। घर लौटते ही रोज़ जो उसके लिए एक यांत्रिक प्रक्रिया थी कि मां को सब बताना, उस प्रक्रिया में आज कुछ जोश था। उसके पास नई–नई बातें और नए सर के किस्से तो थे ही, साथ–साथ वह सब बताने की एक नयी सी चाह भी थी।

स्कूल में बच्चे कई प्रकार के संवाद करते हैं, पर वह सारे उस प्रकार से घर में खुल नहीं पाते क्योंकि घर में उस संवाद का उद्देश्य कुछ और ही होता है। बच्चों में इतनी समझ विकसित हो जाती है कि उन्हें कौन सी बात बतानी है और कौन सी नहीं। लेकिन आज स्कूल में हुई बातें वैसे के वैसे ही घर में खुल पायीं क्योंकि वो कहीं न कहीं कक्षा में हुए औपचारिक संवाद का एक हिस्सा थीं और शिक्षक की एक गतिविधि से जुड़ी हुई थीं।

मिनी की मां को कोरी कॉपी देखकर कुछ हैरानी तो ज़रूर हुई। कई बार शिक्षा व्यवस्था को एक जटिल नियम कायदे के दायरे में सीमित कर दिया जाता है जिससे शिक्षक और बच्चों में खुलकर ज्यादा संवाद की न तो ज्यादा जगह होती है और न ही अक्सर बहुत अच्छा माना जाता है। मां को मिनी का ज्यादा बात करना पसंद भी नहीं आया, न ही नए सर का गप्पें लड़ाना। शायद उसे अगर होमवर्क मिला होता तो मां को नए सर की कक्षा अच्छी लगती। कहने को तो मिनी की कॉपी में बस शीर्षक था पाठ 2– "विविधता" पर नए सर की बातों ने ही बच्चों को विविध तरह की जानकारी दे डाली थी।

कभी न बोलने वाली सुनीता से बुलवाने के अलावा, पूरी कक्षा हुबली तक की सैर कर आयी थी। एक तरफ तो उन्होंने दक्षिण भारत से सांभर और गढ़वाल से चैंसू का स्वाद समझा वहीं दूसरी ओर बातों ही बातों में उनकी चर्चा फ्रॉक से उसके विभिन्न नाम और उद्भव तक जा पहुंची। दरअसल, कक्षा में विविधता की बात तो हो रही थी, बस बिना पाठ पढ़े और कॉपी भरे। चर्चा ने तो भोजन, भाषा, कपडे, झीलों और राजा तक को अछूता न छोड़ा। सोचने की बात यह है कि मिनी और शायद कुछ और बच्चों को यहां अनौपचारिक रूप से घटित कक्षा का संवाद याद रहा होगा और साथ ही साथ उसमें चर्चा किये गए सन्दर्भ भी।

कक्षा में संवाद और उसके तरीके न सिर्फ बच्चों के साथ विषय को खोलते हैं बल्कि उनकी रुचि को भी जगाते हैं। नए सर का आना विद्यालय में न सिर्फ एक नये शिक्षक को लेकर आया, वह शिक्षा के नये तरीकों को भी लाया। जिसमें बच्चे केवल संवाद ही नहीं कर रहे, उसके साथ–साथ वो नए विषयों की चर्चा भी कर रहे हैं। वे न सिर्फ बोलना सीख रहे हैं, पर वह सीख रहे हैं अपने सहपाठियों को सुनना और उनसे सीखना। पाठ्यपुस्तकों में दिये गए पाठों का उद्देश्य यह नहीं होता कि विद्यार्थियों को उसमे दी हुई सारी चीज़ें पता होनी चाहिए। बल्कि कोई भी टॉपिक अवसर देता है कि उस चर्चा को विस्तृत रूप से न केवल कक्षा में खोला जाए बल्कि बच्चे को उस विषय के बारे में सीखने हेतु अपने परिवेश में भी भरपूर अवसर प्रदान हों। राष्ट्रीय पाठचर्या–2005 कहती है, "पाठयचर्या का इस प्रकार सम्वर्धन हो कि वह बच्चों को चहुंमुखी विकास के अवसर मुहैय्या करवाए बजाय इसके कि वह पाठ्यपुस्तक– केन्द्रित बन कर रह जाये।"

सामाजिक विज्ञान का एक विषय के रूप में लक्ष्य है कि मनुष्यों और समाज में मौजूद मानव समूहों की एक सामान्य और समीक्षात्मक समझ विकसित करना। कक्षा–कक्ष में किए गए संवाद जब विषय से सम्बंधित और सरल होते हैं तो न केवल बच्चे की रुचि बढ़ती है, बल्कि वह उस विषय और चर्चा के बारे में स्कूल के बाहर भी विचार करता है। ज्ञान केवल पुस्तकों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसकी रचना एक निरंतर प्रक्रिया है, जिसका रास्ता कक्षा से स्कूल के आंगन तक, स्कूल के आंगन से गेट के बाहर से निकलते हुए घर व समुदाय के बीच तक जाता है।

रही बात नए सर की तो ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है कि आने वाले हफ्ते में नए सर शायद पुस्तक को नहीं खोलेंगे और मां और बाकी अभिभावकों की बेचैनी भी बढ़ रही होगी कि स्कूल है या गप्पें लड़ाने की कोई जगह। सोचने वाली बात यह है, कि क्या उस शिक्षा के कोई मायने हैं जो भरी कॉपी और भारी बस्ते से तो लदी हुई हो लेकिन जिससे बच्चों में बोलने का उत्साह तक न रह जाए और कक्षा में हो रही पढ़ाई एक यांत्रिक प्रणाली बन कर रह जाए।

(लेखिका, अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन टिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड से जुड़ी हैं)